अध्याय–प्रथम

शोध परिचय

अध्याय प्रथम

शोध परिचय

1.1.0 भूमिका

भारत में अनंत काल से आदिवासियों का निवास है। इनकी अपनी संस्कृति, रीति-रिवाज एवं उसको अभिव्यक्त करने हेतु उनकी स्वयं की भाषा होती है। भाषा मानव जाति की सभ्यता, संस्कृति एवं शिक्षा का प्रमुख आधार है। भारत में राज्यनिर्मिती का प्रमुख आधार भाषा है। भारत के अनेक सामाजिक खण्ड समूहों का गठन कहीं धर्मो के आधार पर, कहीं भाषा के आधार पर, कहीं संस्कृति, कहीं भौगोलिक परिस्थिति के आधार पर हुआ है। इनमें से कई समूह ऐसे है, जिन्हें हम अनुसूचित जनजाति या आदिवासी के नाम से पुकारते हैं। जैसे- वन्य जाति, गौंड, बंजारा, आदिवासी माडिया, कोंकणी, कोली, पारधी, भील आदि। स्वतंत्रता के बाद आदिवासियों के लिये नई नीतियाँ एवं प्रावधान निर्माण किये गये और जनजाति को मूल प्रवाह में लाने का प्रयास किया गया। 'महाराष्ट्र' राज्य के परिप्रेक्ष्य में देखें तो इसकी आबादी में एक वर्ग ऐसा है जो सदियों से निरंतर उपेक्षित तथा अविकसित रहा है।

आदिवासी वर्ग के बच्चें अधिकांशतः हीनतर शैक्षिक उपलब्धि प्रदर्शित करते पाए गए हैं। इसकी पृष्ठभूमि में निम्नतर सामाजिक पृष्ठभूमि के साथ ही भाषा का दोषपूर्ण अधिगम भी एक कारण हो सकता है। भाषा वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण माध्यम है जिसके द्वारा शिक्षक छात्रों तक सूचनाएँ सम्प्रेषित करता है। छात्र भी अपने अर्जित ज्ञान की अभिव्यक्ति भाषा के बिना नहीं कर सकते। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पढ़ने की शुरूआत होती है। महाराष्ट्र में पाँचवी कक्षा से हिन्दी पढ़ाई जाती है तथा पाँचवी कक्षा के बालक के लिए यह नई भाषा सीखनी होती है। सातवीं तक आते-आते यह अपेक्षा होती है कि बालक सामान्य रूप से भाषा सीख ले, परन्तु इसके बावजूद हिन्दी लेखन, वाचन में अनेक व्याकरण एवं

रचना संबंधी त्रुटियाँ पाई जाती हैं। पाँचवी कक्षा में जो त्रुटियाँ बालक करता है, वही त्रुटियाँ सातवी कक्षा में भी दुहराई जाती हैं। यह बात काफी चिंताजनक है क्योंकि सातवीं प्राथमिक कक्षा की अंतिम सीढ़ी तथा माध्यमिक कक्षा की शुरूआत है। इसी स्तर पर विद्यार्थियों की हिन्दी भाषा अधिगम संबंधी त्रुटियों के क्षेत्रों की पहचान कर ली जाए तो उन त्रुटियों को शिक्षण विधि एवं शिक्षण प्रक्रिया में वांछित सुधार लाकर दूर किया जा सकता है। व्याकरण की साधारण अशुद्धियों के संशोधन में ही अधिकांश समय चले जाने के कारण शिक्षकगण छात्रों को भाषा की विविध शैलियों का परिचय नहीं दे पाते और न भाषा का प्रांजल और परिष्कृत रूप ही सिखा पाते हैं। भावों के संस्कार तथा कल्पना के समुचित विकास का भी अवसर नहीं मिल पाता है। इस संदर्भ में विद्यालय में दिया जा रहा भाषा शिक्षण कितना प्रभावशाली है तथा छात्रों के भाषा ज्ञान की स्थिति क्या है? इसका परीक्षण करना प्रासंगिक हो जाता है।

शिक्षा के समान अवसर की पृष्ठभूमि में युगों से अस्तित्व बनाने के लिए जूझ रहे आदिवासियों की शिक्षा से संबंधित समस्याओं के विषय में जानना आवश्यक हो जाता है, ताकि उन्हें सामान्य जाति के समकक्ष लाया जा सकें। भाषा शिक्षा का आधार है और इस क्षेत्र में आदिवासी एवं गैर – आदिवासी छात्र–छात्राओं के बीच क्या तुलनात्मक अंतर है यह उचित समय पर ज्ञात करना अत्यावश्यक है। ताकि वे भाषा शिक्षण का अधिकतम् लाभ प्राप्त कर विविध क्षेत्रों में अपनी क्षमता का विकास कर सकें अन्यथा बीच में ही निरंतर असफलताओं से निराश होकर स्कूल छोड़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती रहेगी। आदिवासी हमारे समाज का अभिन्न अंग है। इस अंग की उपयोगिता और प्रतिष्ठा में वृद्धि हो इसके लिये जरूरी है कि वे निर्बाध शिक्षा प्राप्त करें। अतः उन्हें शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयुक्त की जा रही भाषा का समुचित ज्ञान होना आवश्यक है।

1.2.0 भाषा का विकास

भाषा का अभिप्राय प्रक्रियाओं से गहरा संबंध है भाषा सम्पूर्ण प्रक्रिया में एक अद्‌भुत खोज है। भाषा की अत्यावस्था अप्रत्यक्ष सत्ता के समान है। अधिगम में होने वाली त्रुटियाँ भाषा के कारण होती हैं।

ब्रिटनिका विश्वकोश के अनुसार "भाषा ध्वनि प्रतीकों या संकेतों की ऐसी मान्य व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज के लोग आपस में विचार विनिमय करते हैं।"

भाषा के बिना विचार-विनिमय संभव नहीं है। यदि हम कुछ सीखना चाहते हैं तो उसके लिये भी भाषा का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। मैक ग्राण्डी (1986, पेज 226) के अनुसार भाषा अधिगम कम महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। भारत की शिक्षा प्रणाली आज पुनर्रचना के दौर में है। उसका उद्‌देश्य मात्र दर्जे पर बढ़ाना-बढ़ना रह गया है, कक्षा की शैक्षिक सामग्री को आत्मसात करना नहीं। यह तथ्य प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से और भी देखने को मिलता है क्योंकि प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् भी बालक के पढ़ने, लिखने तथा गणना की मूलभूत योग्यताओं का विकास नहीं हो पाता जो बालक की भावी शैक्षिक प्रगति में बाधक है। यही भारतीय शिक्षा का सबसे दुर्बलतम् पक्ष है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि वर्तमान परिस्थिति ने शिक्षा को एक दुरोह पर ला खड़ा किया है। अब न तो अब तक होते आये सामान्य विस्तार से और न ही सुधार के वर्तमान तौर-तरीकों या रफ्तार से काम चलेगा।

(अनु. 19)

समानता के उद्‌देश्य को साकार बनाने के लिए सभी को शिक्षा का समान अवसर उपलब्ध करवाना ही पर्याप्त नहीं होगा, ऐसी व्यवस्था होना भी आवश्यक है जिससे सभी को शिक्षा व्यवस्था में प्रवेश प्राप्त करने में समान अवसर मिले।

(अनु. 3.6)

प्रत्येक चरण पर दी जाने वाली शिक्षा का न्यूनतम स्तर तय किया जायेगा।

(अनु. 3.9)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्धृत किये गये सुझावों से स्पष्ट है कि हमारी शिक्षा में सुधार करना आवश्यक है। किसी भी भाषा को सीखने के चार चरण हैं – क्रमशः सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। इनका एक-दूसरे से घनिष्ठ संबंध है।

1.3.0 आदिवासी एवं शिक्षा

उल्लेखनीय है कि भारतीय संस्कृति में जनजाति समाज एवं संस्कृति आज भी अपना अस्तित्व बनाए है। आदिवासी मूलतः पहाड़ी क्षेत्रों में रहते हैं। इन क्षेत्रों में व्यापार एवं सम्प्रेषण आसानी से नहीं होता। 2001 की जनगणना के अनुसार आदिवासियों की संख्या कुल जनसंख्या के 8.1% है। जिसमें 46% विभिन्न जनजातियाँ सम्मिलित हैं।

1.3.1 आदिवासी का अर्थ एवं परिभाषा

1) मुजूमदार (1962)- जनजाति कुछ परिवारों का समूह है जो निश्चित भूभाग में निवास करती है, एक भाषा बोलता है, एक व्यवसाय अपनाये हुये है और व्यवस्था रखने के लिये एक मान चिन्ह स्थिर किये हुये है।

2) गिलीन और गिलीन- स्थानिक आदिम समूहों के किसी भी समूहों को जो एक सामान्य क्षेत्र में रहता है। एक समान भाषा बोलता हो और एक सामान्य संस्कृति का अनुसरण करता हो उसे आदिवासी कहते हैं।

1.3.2 महाराष्ट्र में आदिवासी

महाराष्ट्र में लगभग 20-25 जातियों को अनुसूचित जनजाति में स्वीकार किया गया है। महाराष्ट्र के बहुतांश भाग में आदिवासी निवास करते हैं। इनमें गौंड, माड़िया, कोरकू, भील जनजाति सबसे अधिक है। प्रदेश में जितनी भी जनजातियाँ रहती हैं, उनकी कुल जनसंख्या में आधे से अधिक

संख्या गौंड लोगों की है। आदिवासी प्रकृति की कोख में किसी पहाड़ी, नदी के किनारे रहना पसंद करते हैं। आदिवासियों के अधिकांश गाँव सड़क से दूर जंगलों में बसे रहते हैं। प्राकृतिक जीवन ही उनका आदर्श जीवन है। भारतीय संविधान में इनका उल्लेख अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribes) से किया है। स्वातंत्र्य पूर्व काल में आदिवासी शिक्षा का सवाल लगभग 'ना' के बराबर था। स्वातंत्र्योत्तर काल में आदिवासियों को राष्ट्रीय प्रवाह में लाने हेतु उनके शैक्षिक विकास की ओर ध्यान दिया गया। महाराष्ट्र में आदिवासयिों की शिक्षा के लिए कई कदम उठाए गए हैं। आदिवासियों की शैक्षिक विकास के लिए कई महान व्यक्तियों ने प्रयास किए जिनमें कै. ठक्कर बाप्पा अग्रगण्य हैं। 1970 के बाद आदिवासी के शैक्षिक विकास को गति प्रदान हुई। इसके उपरांत स्वतंत्र आदिवासी विकास संचालनालय की निर्मिती हुई। इस संचालनालय द्वारा आश्रमशालाओं की योजना को कारगर करने का प्रयास हुआ। स्वतंत्र आदिवासी विकास महामंडल निर्माण किया गया। महाराष्ट्र में प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा का माध्यम मराठी है। बहुतांश आदिवासी विद्यार्थियों की मातृभाषा मराठी नहीं होती। इसलिए ऐसे आदिवासी बालक-बालिकाओं को (विशेषतः 'आदिम' जाति के) मराठी माध्यम में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई होती है तथा माड़िया-गौंड़ी, कोलामी आदि भाषायें मराठी से मूलतः भिन्न हैं। आदिवासी विद्यार्थियों की यह परेशानी दूर करने के लिए तत्कालीन शिक्षणशास्त्र संस्था में (आज की महाराष्ट्र राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् [SCERT])। आदिवासी बोली भाषा प्रकल्प शुरू किया गया। इस प्रकार कई योजनाएं क्रियान्वित की गई और आदिवासियों के शैक्षिक विकास का प्रयास किया गया। परन्तु अभी भी स्थिति संतोषजनक नहीं है तथा ऐसे कदम उठाने होंगे जिससे आदिवासियों के शिक्षा के साथ-साथ उनकी संस्कृति पर भी अनुकूल एवं दूरगामी परिणाम हो।

1.3.3 आदिवासियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान में आदिवासियों के लिए कई प्रकार के प्रावधान रखे गये हैं। यह प्रावधान विशेषकर आदिवासी पिछड़े समाज के लिए रखे गये हैं।

1. भाग-3 (अनु.29) भारतीय संविधान अल्पसंख्यकों, वंचित वर्ग एवं आदिवासियों के शैक्षिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा करेगा।
2. भाग-4 (अनु.46) राज्य वंचित वर्ग, आदिवासी एवं हरिजनों, अल्पसंख्यकों की शिक्षा एवं आर्थिक सहायता करके उन्हें उनके पूर्ण विकास करने में सहायता देकर आगे बढ़ायेगा।
3. भाग-12 (अनु.272) के अनुसार यह सरकार द्वारा राज्य सरकार को वहाँ के आदिवासियों की प्रगति के लिये केन्द्र सरकार से आर्थिक महत्व दिलावाना है।
4. (अनु. ए-339) भारत के राष्ट्रपति किसी भी कमीशन को नियुक्त करके आदिवासी एवं पिछड़े वर्ग की जानकारी प्राप्त करके उनकी कठिनाईयों को अपने तरीके से दूर कर सकता है।
5. संविधान के (अनु.15) के अनुसार राज्य (देश) किसी भी नागरिक के विरूद्ध जाति, वर्ग, लिंग, उन्नति एवं जन्म स्थान आदि कारणों से अन्याय नहीं करेगा।
6. संविधान के (अनु.29) में पिछड़े नागरिकों को अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की सामा. एवं शैक्षिक उन्नति एवं प्रगति के लिए विशेष प्रावधान का उपयोग किया गया।
7. संविधान के (अनु. 29 द्वितीय) में कहा गया है कि कोई भी नागरिक किसी भी शैक्षिक संस्था में प्रवेश देने को मना नहीं करेगा। अपनी जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति आदि के लिए राज्य को अधिकृत किया गया है।

8. संविधान के (अनु.46) में राज्य नीति–निर्देशक तत्वों के अंतर्गत कहा गया है कि शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लोगों का विशेष ध्यान रखना, उनकी प्रगति एवं उन्नति करने में सहायता देना तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषणों से इनकी रक्षा करना राज्य का उत्तरदायित्व होगा।

1.3.4 एन.सी.एफ. 2005 (एन.सी.ई.आर.टी.)

एन.सी.एफ. में ''अनुसूचित जनजातियों के बच्चों की समस्याएँ'' इस विषय पर विस्तृत चर्चा हुई है। इसके अंतर्गत 'एक भाषा समस्या' इस विषय को रेखांकित किया गया है।

अब तक के सभी संवैधानिक प्रावधान (350 अ) तथा योजना दस्तावेज में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर पर भाषिक अल्पसंख्यकों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा दी जानी चाहिए। प्रत्यक्ष रूप से जनजाति भाषा में कहीं भी शिक्षा नहीं दी जाती। इसके अंतर्गत मूलतः संथाली, भीली, गौंडी आदि भाषाएँ भी आती हैं। जिसे लगभग लाखों लोग बोलते हैं। हाँलाकि भारत में राज्यों का गठन भाषा की धरती पर हुआ है फिर भी अनुसूचित जनजातियों की राजकीय शक्तिहीनता के कारण जनजातीय भाषाओं को राज्य में उचित दर्जा प्राप्त कराने में असफल रहे हैं। वे बड़े राज्य में एक अल्पसंख्यक स्तर पर सीमित रह जाते हैं तथा उन्हें उसी राज्य की भाषा में शिक्षा लेनी पड़ती है। प्राथमिक शिक्षक आमतौर पर गैर–आदिवासी रहते हैं तथा जो पाठ्यक्रम एवं निर्देश होते हैं वह राज्य की भाषा में होते हैं, इसलिए नियुक्ति के कई सालों तक वे जनजाति भाषा से अनभिज्ञ रहते हैं।

इसके अलावा भाषा समस्या से एक महत्वपूर्ण बात सामने आयी है कि इस समस्या के कारण बालकों का व्यक्तित्व कहीं खो रहा है तथा शिक्षा की सफलता भी कम होती नजर आ रही है। जनजाति भाषा सिर्फ भाषा नहीं बल्कि उनकी संस्कृति की पहचान है। कई बार आदिवासी बच्चे

उनकी भाषा में बोलते पाये जाते हैं तो उन्हें अशिक्षित बच्चों के समूह में डाल दिया जाता है। सामान्य तौर पर प्राथमिक स्तर की स्थिति देखें तो आदिवासी बच्चे तथा गैर-आदिवासी शिक्षक इनमें हमेशा असंतुलन बना रहता है। कई अध्ययनों से यह पता चलता है कि प्राथमिक स्तर पर भाषा समस्या सबसे महत्वपूर्ण समस्या है।

1.4.0 द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का महत्व

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का विशेष महत्व है। संवैधानिक दृष्टि से वह भारत की राजभाषा है। मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार, दिल्ली, हरियाणा इन राज्यों की तो यह मातृभाषा है। देश के अन्य राज्यों महाराष्ट्र, गुजरात, उड़ीसा, कर्नाटक आदि इन अहिन्दी राज्यों में यह द्वितीय भाषा के रूप में कक्षा 5 से पढ़ाई जाती है। हिन्दी हमारे देश में युग-युग से विचार-विनिमय का माध्यम रही है। यह केवल उत्तर भारत की भाषा नहीं बल्कि दक्षिण भारत के प्राचीन आचार्यों, बल्लभाचार्य, विट्ठल, रामानुज, आदि ने भी इस भाषा के माध्यम से अपने सिद्धान्तों और मतों का प्रचार किया है। अहिन्दी भाषी राज्यों के सन्त कवियों आसाम के शंकरदेव, महाराष्ट्र के नामदेव और ज्ञानेश्वर, गुजरात के नरसी मेहता, बंगाल के चैतन्य आदि ने इसी भाषा को अपने धर्म और साहित्य का माध्यम बनाया।

सन् 1949 ई. को दिल्ली अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा व्यवस्था परिषद में एक बंगाली विद्वान श्री क्षेमश्चंद्र चट्टोपाध्याय ने अपने भाषण में कहा था- ''संसार की ऐसी कोई भी भाषा नहीं है जिसकी कोई अपनी विशेषता न हो। उसकी यह विशेषता ही अन्य भाषा-भाषियों के लिएं उलझन बन जाती है। हमारी बंगला भाषा में ही ऐसी चीज है, जो अन्य भाषा-भाषियों के लिये कठिन समस्यायें हैं। वे लोग इन बारीकियों को समझे बिना जब बंगला भाषा लिखते-बोलते हैं, तब हम लोगों को हंसी आती है, परन्तु हिन्दी बहुत सरल भाषा है। बिना पढ़े और सीखे यह कामचलाऊ हो

जाती है। ऐसी कामचलाऊ भाषा तो साधारण होगी ही इसमें लिंग संबंधी तथा अन्यान्य गलतियाँ भी होंगी, पर काम सबका चल जाता है। परन्तु उत्तम टकसाली हिन्दी लिखने-बोलने के लिए तो हिन्दी सीखनी होगी। यदि हिन्दी पढ़ने-सीखने में दो वर्ष भी अच्छी तरह लगाये जाएं तो किसी भी अहिन्दी भाषी के सामने कोई कठिनाई न रहेगी।''

हिन्दी का सम्पर्क भाषा के रूप में महत्व यह है कि जब दो या अधिक भाषायी लोग एकत्र आते हैं तब वे अपना सम्प्रेषण हिन्दी भाषा के द्वारा करते हैं और यह हमें उद्योग, व्यापार एवं व्यवसाय के क्षेत्र में अधिक दिखाई देता है।

उच्च ज्ञान प्राप्त करने हेतु भी द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का महत्व है। हिन्दी साहित्य के महान इतिहास का ज्ञान, हिन्दी भाषा की संरचना का ज्ञान, साहित्यकारों, काव्यशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने के लिए हिन्दी का महत्व है।

1.5.0 प्रारंभिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण

शिक्षा के विभिन्न स्तरों में से प्रारंभिक स्तर पर हिन्दी भाषा का ज्ञान विद्यार्थी के अपने रूचि, योग्यता, शिक्षक की शिक्षण कुशलता पर आधारित होता है। जिस क्रिया द्वारा विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा से संबंधित भाषा कौशलों में प्रवीणता प्रदान करके उसके चिन्तन तथा अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया जाता है तथा जीवन से संबंधित किसी भी विषय का अध्ययन करने का सामर्थ्य विकसित किया जाता है उसे ही हिन्दी शिक्षण कहा जाता है।

हिन्दी तथा अहिन्दी भाषा प्रदेशों में हिन्दी के शिक्षण में पर्याप्त अंतर है। पिछली शताब्दी तक बहुभाषी होना व्यक्ति की सांस्कृतिक संपन्नता का द्योतक था, किन्तु आज की स्थिति सर्वथा भिन्न है, अब वह एक व्यावहारिक आवश्यकता बन गई है। इक्कीसवी शताब्दी में द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में भाषा की जानकारी के इस लक्ष्य परिवर्तन को समझना

अत्यावश्यक है। आज हम एक दो प्रमुख भाषाओं की जानकारी केवल इसलिये नहीं करना चाहते कि अन्य भाषा–भाषी व्यक्तियों के जीवन को व्यापक स्तर पर समझे, उनके साथ हम जीवनगत उपलब्धियों का आदान–प्रदान कर सकें।

अहिन्दी भाषा शिक्षण का तात्पर्य किसी अहिन्दी प्रदेश में मातृभाषा से भिन्न द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में हिन्दी सिखाना। हिन्दी अपने देश की राष्ट्रभाषा है। हमारे देश में हिन्दी शिक्षण के दो रूप हैं : एक तो हिन्दी भाषा–भाषी प्रदेशों में मातृभाषा के रूप में (प्रथम भाषा) और दूसरे अहिन्दी भाषा–भाषी प्रदेशों में जिनकी मातृभाषा कुछ और है वहाँ अन्य भाषा के रूप में (द्वितीय भाषा)।

1.6.0 भाषा के कौशल

किसी भी भाषा के सीखने के चार चरण हैं जो क्रमशः सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना है। इनका एक दूसरे से घनिष्ठ संबंध है। इन चारों कौशलों का विकास क्रम में होता है। जैसे– बिना सुने बोला नहीं जा सकता। बोलने के लिए सुनना अत्यंत आवश्यक है। तत्पश्चात् वह पढ़ना एवं लिखना सीखता है। अतः इन चारों में से यदि पहले कौशल का विकास बच्चों में नहीं हो पाया, तो वह बाद के कौशल नहीं सीख सकता। सुनना व बोलना किसी भी भाषा को सीखने का पहला चरण है। इसलिए इसको प्राथमिक या निवेशी कौशल के नाम से जाना जाता है तथा पठन व लेखन इनके फलस्वरूप ही विकसित होते हैं, अतः इन्हें द्वितीय या निर्गत कौशल की संज्ञा दी गई है।

बालक जन्म के कुछ दिनों में मातृभाषा सीख लेता है। अपने परिवार एवं समाज में रहकर मातृभाषा सीखता है। परन्तु द्वितीय भाषा बच्चे विशेष प्रयत्न द्वारा सीखते हैं। मातृभाषा एवं द्वितीय भाषा सीखने में मूलभूत अंतर यह है कि द्वितीय भाषा सीखने के लिये सर्वप्रथम पढ़ना एवं लिखना सीखते हैं और उसके बाद उसका सुनना और बोलना सीखते हैं। इस प्रकार

वार्तालाप के जिस कौशल को मातृभाषा में सर्वप्रथम स्वाभाविक रूप से सीख लिया जाता है, उसे द्वितीय भाषा में सीखने के लिए अंतिम चरण में सप्रयत्न सीखा जाता है।

1.6.1 वाचन कौशल

विद्यालय में अभिन्न अंग के रूप में पुस्तकालय विद्यार्थी की शैक्षिक वृद्धि को गति प्रदान करते हैं, किन्तु पुस्तकालयों का सर्वोत्तम संभव उपयोग तभी हो सकता है जब अभिभावकों, शिक्षकों तथा पुस्तकालय कर्मियों को वाचन कौशल की समुचित जानकारी हो तथा वे तीनों परस्परपूरक रूप में विद्यार्थी की विशिष्ट अभिरूचियों के अनुरूप उसमें इस कौशल का सफल हस्तांतरण करने का सक्रिय प्रयत्न करें। अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि प्रभावपूर्ण वाचन कौशल का अभाव शैक्षिक प्रगति के मार्ग में अनेक समस्याएं उत्पन्न कर सकता है। ज्ञान के तीव्र प्रसार के इस युग में यदि हमें अपने विद्यार्थियों को पिछड़ने से बचाना है तो उन्हें वाचन कौशल की दक्षता की आवश्यकता है।

- पाठ्य सामग्री के केन्द्रीय भाव को समझने की क्षमता।
- लिखित सामग्री के निहित लेखक का अप्रत्यक्ष तात्पर्य समझने की योग्यता
- सौद्देश्यीकरण एवं वर्गीकरण की योग्यता।
- तथ्य एवं मन में अंतर करने की क्षमता।
- पाठ्य सामग्री पर सृजनात्मक चिन्तन कर सकने की क्षमता।

वाचन का अर्थ

पढ़ने की शिक्षा के लिए ''वाचन'' शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से किया जाता है। ''वाचन'' शब्द 'वक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है- शब्द, वाणी अथवा कथन। लिखे हुए अथवा छपे हुए शब्दों का उच्चारण करना वाचन कहलाता है, परन्तु यह वाचन का संकुचित अर्थ है। वास्तव में लिखित सामग्री को पढ़ते हुए अर्थ ग्रहण करने की प्रक्रिया को वाचन कहा जाता है।

वाचन के रूप

1. सस्वर वाचन 2. मौन वाचन

1. सस्वर वाचन : स्वर सहित पढ़ते हुए अर्थग्रहण करने को सस्वर वाचन कहा जाता है। यह वाचन की प्रारंभिक अवस्था होती है। शब्द और वाक्यों को शुद्ध उच्चारण के साथ-साथ उचित गति से पढ़ने का अभ्यास सस्वर वाचन के द्वारा ही कराया जाता है।

हमें यह देखना है कि बच्चा कहाँ उच्चारण ठीक कर रहा है कहाँ गलत। उचित गति, हावभाव, आरोह-अवरोह एवं विराम का पालन ठीक से कर रहा है या नहीं।

वाचन योग्यता का महत्व

भाषा शिक्षा के अंतर्गत पठन शिक्षण का महत्वपूर्ण स्थान है। वाचन भाषा के द्वारा विचारों के आदान का एक प्रभावपूर्ण माध्यम भी है। अन्य सभी विषयों में सफलता वाचन में सफलता पर निर्भर करती है। यहां तक कि वाचन में असफलता सफलता का प्रभाव बच्चों की विद्यालयीन शिक्षा पर पड़ता है। वाचन ही व्यक्ति के ज्ञान में वृद्धि कर उसमें उचित भावनाओं का संचार करता है और जीवन के किसी भी कार्यक्षेत्र के लिए आवश्यक कौशल प्रदान करता है। अतः बच्चे में वाचन कौशल को विकसित करना भाषा शिक्षण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है।

वाचन की सामान्य त्रुटियाँ

1. अशुद्ध उच्चारण 2. अनुचित लय एवं गति
3. अनुचित बल एवं विराम 4. पुनरावृत्ति
5. शब्द विकृति 6. शब्दलोप
7. शब्द जोड़ना 8. शब्द स्थानापन्न

कारण

1. दृष्टि संबंधी वाणी दोष 2. शब्द भण्डार की कमी के कारण

3. वाचन अभ्यास की कमी
4. पाठ्य सामग्री का कठिन होना
5. मनोवैज्ञानिक कारण
6. कक्षा का तनावपूर्ण वातावरण
7. अध्यापक का व्यवहार
8. वाचन संबंधी मार्गदर्शन का अभाव
9. अरूचिकर पाठ्य सामग्री
10. असावधानी

उपाय

1. शारीरिक उपचार द्वारा दृष्टिदोष व वाणी दोष को दूर करने का प्रयास।
2. शब्द भण्डार में वृद्धि करना।
3. ध्वनियों का पूर्ण ज्ञान व अभ्यास।
4. सस्वर वाचन।
5. छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल पाठ्यसामग्री का चुनाव।
6. पाठ्यपुस्तकों की शुद्ध छपाई।
7. बच्चों से सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार।
8. वाचन संबंधी उचित मार्गदर्शन।
9. वाचन से पहले कठिन शब्दों की व्याख्या।
10. सावधानी से पढ़ने का अभ्यास कराना।

कक्षा सातवीं तक बालक में ऐसी क्षमता तथा योग्यता का विकास हो जाना चाहिए कि वह एकल, संयुक्त और मिश्रित ध्वनियों का शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण कर सके। प्रायः ऐसा नहीं होता। कक्षा में कभी-कभी किसी बालक का व्यवहार अन्य बालकों के मुकाबले बड़ा असामान्य अर्थात् बहुत अच्छा और बुद्धिमत्तापूर्ण या बहुत पिछड़ा हुआ अवांछनीय सा लगता है। इस तरह बालकों की विशिष्टिता पहचानकर उनकी व्यवस्था करना भी शिक्षक की जिम्मेदारी है।

1.6.2 लेखन कौशल

श्रीमती मांतेसरी के मतानुसार लेखन केवल एक शारीरिक क्रिया है। जिसमें बालकों को हाथों की गतिविधियाँ ही करनी पड़ती हैं। यह कार्य

वाचन की अपेक्षा सरल है और उन्हें आनंद की प्राप्ति होती है। पढ़ने में बालकों को अक्षरों की आकृति का ज्ञान होना चाहिए, परन्तु लिखने में अक्षरों की आकृति के ज्ञान के साथ उन अक्षरों की आकृति का ज्ञान होना चाहिए। परन्तु लिखने में अक्षरों की आकृति के ज्ञान के साथ उन अक्षरों को वैसा ही लिख सकने की क्षमता भी होनी चाहिए और इसके लिये आवश्यक है कि हाथ की उंगलियों की मांसपेशियों का यथोचित संतुलन। यदि शब्दों का ध्वन्यात्मक परिचय बालकों को पहले से ही प्राप्त होगा तो उनके लिए वाचन के सहारे लिखना सीखना अधिक सुविधाजनक होगा। कई बार ऐसा होता है कि हम किसी भाषा को पढ़कर समझ तो सकते हैं, परन्तु उसमें लिख नहीं सकते।

महत्व

प्राचीन समय से ही भारत वर्ष में सुन्दर लेखन पर विशेष ध्यान दिया जाता रहा है। अक्षर सुडौल हो सुन्दर हो इस पर विशेष बल दिया जाता था। न केवल प्राचीन काल में अपितु मध्य काल में भी सुंदर लेख का बड़ा महत्व था।

बालकों को खेलना सीखने से पहले उनमें लेखन संबंधी जिज्ञासा उत्पन्न करना आवश्यक है तभी वे लेखन कार्य में रूचि लेंगे। बालक क्रियाशील होते हैं। हमें उनकी इस क्रियाशीलता को प्रोत्साहित करना चाहिए। बालकों को रंगीन चित्र अच्छे लगते हैं। हम बालकों को भिन्न-भिन्न चित्रों की रूपरेखा देकर रंग भरने को कह सकते हैं। बालक इस कार्य में बड़ी रूचि लेंगे। इसी प्रकार हम बालकों को देखी हुई वस्तुएँ पेंसिल आदि द्वारा बनाने को कह सकते हैं। बालकों की इस रचनात्मक वृत्ति का उपयोग एक कुशल अध्यापक द्वारा अक्षर लेखन में कराया जा सकता है।

भाषा के जो भिन्न-भिन्न अंग हैं :- जैसे - बोलना और पढ़ना उनकी अपेक्षा लेखन का कार्य कठिन है क्योंकि लिखते समय हाथ की मांसपेशियों के संतुलन की आवश्यकता पड़ती है। ठीक-ठीक लिखने के लिए

यह आवश्यक है कि बालक अक्षरों की आकृति का भली प्रकार से निरीक्षण करें और फिर वैसे ही अक्षर लिख सकने में समर्थ हो। बालकों की विद्यालयों में जो भिन्न-भिन्न प्रकार की क्रियाएँ होती हैं उनका एक प्रयोजन यह भी होता है कि बालकों के भिन्न-भिन्न अंगों की मांसपेशीय में संतुलन स्थापित किया जाए। मांसपेशियों में संतुलन स्थापित होने के पश्चात् ही बालकों को प्रेरित किया जा सकता है।

लेखन की सामान्य त्रुटियाँ

1. मात्रात्मक त्रुटि।
2. बिन्दुगत त्रुटि।
3. विरामचिन्हों की त्रुटि।
4. योजक चिन्ह की त्रुटि।
5. रेफ की त्रुटि।
6. संयुक्ताक्षर की त्रुटि।
7. शब्दजोड़ की त्रुटि।
8. शब्दलोप की त्रुटि।

सुधार (संशोधन विधि)

1. कक्षा में तथा विद्यालय के खाली समय में ही यथासंभव संशोधन कार्य पूरा कर लेना चाहिए। यदि इस पर संशोधन कार्य पूरा नहीं हो तो शिक्षक रचना-पुस्तिकाएँ घर ले जाकर संशोधन कर सकता है।

2. अशुद्धियों का संशोधन रचनात्मक दृष्टि से होना चाहिए। केवल लाल रंग के चिन्हों से कापी भर देना संशोधन नहीं है। इससे छात्र हतोत्साहित हो जाते हैं। अशुद्धि काटकर उसका शुद्ध रूप लिखना आवश्यक है।

3. कुछ अशुद्धियाँ असावधानी के कारण होती हैं। उनका शुद्ध रूप छात्र को ज्ञात रहता है। ऐसी अशुद्धियों की ओर केवल संकेत या प्रश्नसूचक चिन्ह लगा देना ही यथेस्ट है? इनका संशोधन बालक स्वयं कर लेते हैं।

4. कुछ ऐसी भी अशुद्धियाँ होती हैं जिन्हें बालक भ्रमवश या विस्मरण के कारण कर देता है। ऐसी अशुद्धियों का भी केवल संकेत आवश्यक है, जिससे बालक स्वयं संशोधन कर लें।

5. कठिन अशुद्धियों को संशोधित रूप अवश्य दे देना चाहिए।

6. संशोधन के बाद देखना आवश्यक है कि बालक शुद्ध रूप का अभ्यास कर लें और पुरानी त्रुटियाँ न दोहराएँ। थामसन एवं वायट ने ठीक ही लिखा है कि वह संशोधन जो अशुद्धि करनेवाले को प्रभावी न करें समय का अपव्यय है।

7. छात्रों पर स्वयं संशोधन के लिए नहीं छोड़ना चाहिए।

8. विरामचिन्हों के सही प्रयोग का उल्लेख स्वयं कर लेना चाहिए।

9. सर्व सामान्य त्रुटियों की सूची तैयार कर लेनी चाहिए और कक्षा में उन्हें क्रमायोजित रूप से बनाते हुए उनके संशोधनार्थ उचित अभ्यास देने चाहिए।

10. व्यक्तिगत रूप से की जानेवाली त्रुटियों का संशोधन व्यक्तिगत छात्र को बता देना चाहिए।

अन्य बातें

1. अशुद्धियाँ असावधानी भ्रम तथा अज्ञानता के कारण होती है। इन तीनों कारणों से होने वाली अशुद्धियों का समुचित संशोधन आवश्यक है। असावधानी या भ्रम के कारण हुई अशुद्धि की ओर संकेत कर देना ही पर्याप्त है पर अज्ञानता के कारण होने वाली अशुद्धि का संशोधित रूप लिख देना चाहिए।

2. त्रुटियों के प्रति कभी भी उदासीनता नहीं दिखानी चाहिए, अन्यथा छात्रों को अशुद्ध लिखने की आदत पड़ जाती है।

3. त्रुटियों को इकट्ठा नहीं होने देना चाहिए। तत्काल त्रुटि संशोधन से त्रुटियाँ बढ़ने नहीं पाती।

4. संशोधन की तीनों पद्धतियों का यथोचित प्रयोग करना चाहिए।

- सामूहिक संशोधन।
- छात्रों द्वारा परस्पर रचना-पुस्तिका बदलकर एवं दूसरे का संशोधन।
- शिक्षक द्वारा व्यक्तिगत छात्र की रचना का संशोधन।

5. सामान्य त्रुटियों की सूची तैयार कर भाषा, व्याकरण तथा अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों को वर्गीकृत करके क्रमायोजित रूप से उनके शुद्ध रूप का प्रचुर अभ्यास देना चाहिए।

अहिन्दी प्रदेश में प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर दिया जा रहा हिन्दी शिक्षण कितना प्रभावशाली है, इसका ज्ञान वांछित संभव नहीं है। लिखित भाषा रचना के विशिष्ठ क्षेत्रों से सम्बन्धित सामान्य तथा अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की तुलनात्मक समस्याओं तथा वर्तमान समय में प्राथमिक शिक्षा प्राप्ति के उपरांत दोनों जातियों की हिन्दी भाषा रचना संबंधी उपलब्धि के स्तर में तुलनात्मक अंतर भी पर्याप्त नहीं हुए हैं।

1.7.0 अध्ययन का औचित्य

संबंधित समस्या के अध्ययन से यह प्रमाणित किया जा सकता है कि महाराष्ट्र में आदिवासी तथा गैर-आदिवासी विद्यार्थी (कक्षा 7) के हिन्दी भाषा अधिगम में किस तरह की त्रुटियाँ करते हैं। भाषा संबंधी ज्ञान में परिपक्व बालक जीवन में अपेक्षाकृत अधिक सफल होता है। क्योंकि सशक्त अभिव्यक्ति, शुद्ध भाषिक प्रयोग, प्रसंगानुसार अर्थबोध की उसकी दक्षता, जीवन में उसे प्रतिक्षण सफलता का बोध कराती है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के माध्यम से हमारा अभिप्राय कक्षा 7 के विद्यार्थियों (धुले जिला- महाराष्ट्र) के हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियों

का पता लगाना है। अक्सर यह देखा जाता है कि बच्चे कक्षा में उत्तीर्ण तो हो जाते हैं, किन्तु अगली कक्षा में वहीं त्रुटियाँ दोहराई जाती है। अतः इन त्रुटियों को उचित समय पर ढूँढ़ना आवश्यक तथा औचित्यपूर्ण होगा तथा उनमें योग्य सुधार करना आवश्यक होता है। बच्चों को यदि श्रुतलेखन दिया जाए तो वे कई प्रकार की त्रुटियाँ कर देते हैं, बच्चे उचित आरोह अवरोह के साथ वाचन नहीं कर पाते। भाषा अधिगम में होने वाली त्रुटियों के निम्न कारण हो सकते हैं:-

- छात्रों के अंदर भाषायी कौशल का विकास न हो पाना।
- मातृभाषा के प्रभाव के कारण।
- छात्रों को योग्य मार्गदर्शन न मिल पाया हो।

इस अध्ययन द्वारा कक्षा 7 (धुले जिला महाराष्ट्र) के विद्यार्थियों के हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली उन त्रुटियों को ढूँढ़ने का प्रयास किया गया जिनके कारण विद्यार्थियों को भविष्य में हिन्दी भाषाज्ञान में कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इस बात का बोध हो सकेगा कि हम कहाँ खड़े हैं? अभी तक किए प्रयत्नों में कहाँ दोष है? इससे यह सोचना संभव हो सकेगा कि अहिन्दी भाषिक क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षण के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर हिन्दी भाषिक सुधार संबंधी कोई अभियान संचालित किया जा सकता है क्या? इस अध्ययन से आदिवासी तथा गैर-आदिवासी छात्रों, छात्राओं के हिन्दी भाषा अधिगम में होने वाली त्रुटियों का पता चलता है तथा इनमें अंतर है या नहीं इसका ज्ञात होता है। किस प्रकार की त्रुटि तथा किस कौशल में अंतर पाया गया है, या अंतर नहीं पाया गया है यह ज्ञात होगा। भविष्य में इनके कारणों का पता लगाने तथा उपचारात्मक अध्ययन हेतु एवं संबंधित अनुसंधान के लिए यह अध्ययन निश्चित रूप से सहायता प्रदान करेगा।

1.8.0 समस्या कथन

"उच्च प्राथमिक स्तर पर आदिवासी तथा गैर-आदिवासी विद्यार्थियों के हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन"

1.9.0 पदों एवं संकल्पनाओं की परिभाषा

1. उच्च प्राथमिक स्तर

उच्च प्राथमिक स्तर का प्रयोग शैक्षिक संदर्भ में है। महाराष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षा 1 से 4 कक्षा तक तथा उच्च प्राथमिक स्तर 5 से 7 तक है।

2. आदिवासी

जनजाति जो वनक्षेत्रों में रहती है। संख्यात्मक रूप से एवं भौतिक संसाधन, आर्थिक दृष्टि से निम्न है । भारतीय संविधान में इन्हें ''अनुसूचित जनजाति (Scheduled Tribes) ऐसा कहा गया है।

3. गैर-आदिवासी

गैर-आदिवासी वह है जो तुलनात्मक दृष्टि से संख्यात्मक रूप से, भौतिक संसाधन एवं आर्थिक दृष्टि से उच्चतम है।

4. हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियाँ

इस अध्ययन में हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियों से तात्पर्य वाचन एवं लेखन कौशल में होनेवाली त्रुटियों से है।

5. तुलनात्मक अध्ययन

तुलनात्मक अध्ययन पद्धति केवल तुलनाओं को प्रस्तुत करने की विधि नहीं अपितु तुलनाओं के द्वारा व्याख्या करने की विधि है।

1.10.0 अध्ययन के उद्देश्य

1. आदिवासी तथा गैर-आदिवासी विद्यार्थियों के वाचन संबंधी त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. आदिवासी तथा गैर-आदिवासी विद्यार्थियों के लेखन संबंधी त्रुटियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. आदिवासी विद्यार्थियों के वाचन संबंधी त्रुटियों का अध्ययन करना।

4. आदिवासी विद्यार्थियों के लेखन संबंधी त्रुटियों का अध्ययन करना।

5. गैर–आदिवासी विद्यार्थियों के वाचन संबंधी त्रुटियों का अध्ययन करना।

6. गैर–आदिवासी विद्यार्थियों के लेखन संबंधी त्रुटियों का अध्ययन करना।

1.11.0 परिकल्पनाएँ

H_{01} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी विद्यार्थियों के हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{02} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी बालकों के हिन्दी भाषा अधिगम में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{03} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी बालिकाओं के हिन्दी भाषा अधिगम में होनेवाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{04} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी विद्यार्थियों के वाचन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{05} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी विद्यार्थियों के लेखन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{06} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी बालकों के वाचन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{07} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी बालिकाओं के वाचन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{08} - आदिवासी एवं गैर–आदिवासी बालकों के लेखन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

H_{09} - आदिवासी एवं गैर-आदिवासी बालिकाओं के लेखन में होने वाली त्रुटियों में सार्थक अंतर नहीं है।

D - 232

1.12.0 सीमांकन

1. प्रस्तुत अध्ययन महाराष्ट्र राज्य के धुले जिला के धुले तहसील तक सीमित है।

2. प्रस्तुत शोधकार्य कक्षा 7वीं के विद्यार्थियों तक सीमित है।

3. इस शोधकार्य में हिन्दी भाषा के विभिन्न कौशलों में से वाचन एवं लेखन को ही शामिल किया है।